ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 222-225

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

संस्कृत नाट्य साहित्य की पाश्चात्य समीक्षा

ज्योति त्रिपाठी

असि० प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बहराईच (उ0प्र0) भारत

Received-15.02.2023, Revised-20.02.2023, Accepted-25.02.2023 E-mail: jyotibhargavi29@gmail.com

सारांशः ***संस्कृत साहित्य के महत्वपूर्ण अंग नाट्य की महत्ता एवं रसमयता भारत में ही नहीं अपितु, सम्पूर्ण विश्व में प्रसारित है। भरतमुनि ने नाट्य को ब्रह्मा द्वारा रचित 'पंचम् वेद' की संज्ञा दी है। पाश्चात्य विद्वानों द्वारा नाट्य के विभिन्न तत्वों की समाज एवं प्रकृति के आधार पर नाट्योंत्पत्ति की समीक्षा की गयी है। पाश्चात्य विद्वान डॉ0 रिजवे वीर पुरुषों के प्रति जातीय आदर प्रकट करने की भावना से पूर्व ग्रीक दुखान्त नाटक का प्रारम्भ मानते है जिसे, आधार मानकर भारत में कृष्ण लीला एवं राम लीला का प्रारम्भ हुआ। डॉ0 कीथ द्वारा 'संस्कृत ड्रामा' में प्राकृतिक परिवर्तन को मूर्त रूप देने का प्रयास किया गया। डॉ0स्टेन कोनो ने पाश्चात्य देशों में होने वाले 'मेपोल' नृत्य को ही भारतीय नाट्य उत्पन्न होने का कारण कहा है। डॉ0बेबर एवं प्रो0 विण्डिश ने ऋग्वेद् के संवाद सूक्तों को संस्कृत नाटक के गद्यपद्यात्मक होने का कारण बताया है। डॉ0 बेबर एवं विण्डिश ने ग्रीक एवं भारतीय नाटकों में समानता बताई। कुछ विद्वान संस्कृत रूपकों को स्पैनिश एवं अँग्रेजी रचनाकार शेक्सपियर के समान बताते हैं। वहीं श्वैजल एवं जॉनसन जैसे विद्वानों ने संस्कृत एवं अँग्रेजी रूपकों की भिन्नताओं को प्रतिपादित भी किया है। दूसरी ओर कालिदास के प्रसिद्धनाटक आभिज्ञानशाकुंतलम् पर सर विलियम जोन्स एवं गेटे द्वारा इसकी प्रशंसा करना, भास द्वारा रचित 'स्वप्नवासवदत्ता' को डॉ0 थॉमस का समर्थन प्राप्त होना, शूद्रक के 'मृच्छकटिक' को ए0एल0 बॉशम का समर्थन प्राप्त होना, विशाखदत्त के मुद्राराक्षस को कीथ का समर्थन आदि ऐसे अनेक तथ्य हैं, जो नाटकोपत्ति की भारतीय प्रामाणिकता को सिद्ध करते हैं। निष्कर्ष रूप में संस्कृत रूपक प्रकृष्ट प्रतिभा के भारतीय प्रसूति बताए गए हैं। इन्ही तथ्यो को सम्पूर्ण शोध पत्र में अनेक प्रमाणों के साथ सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।***

कुंजीभूत शब्द– रसमयता, प्रसारित, नाट्योंत्पत्ति, संस्कृत ड्रामा, गद्यपद्यात्मक, संस्कृत रूपकों, रचनाकार, प्रकृष्ट।

कालिदास ने अपने नाटक 'मालविकाग्निमित्रम्' में नाट्य की प्रशंसा करते हुए कहा था कि–

'देवानामिदमामनन्ति मुनयः शान्तं ऋतुं चाक्षुषं
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वांगे विभक्तं द्विधा।
वैगुण्योद्भवमष लोकचरितं नानरसं दृश्यते नाट्यं
भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम्।।'

संस्कृत साहित्य का एक महत्वपूर्ण एवं कमनीय अंग नाट्य है, जो इसकी महत्ता एवं रसमयता को सम्पूर्ण विश्व में प्रचारित एवं प्रसारित करता है। भारतीय परम्परात्मक मान्यता के अनुसार, इन्द्रादि देवताओं ने ब्रह्मा से ऐसा श्रव्य दृश्य काव्य बनाने की प्रार्थना की जिसका ज्ञान समस्त वर्णो के लिए प्राप्य हो। भरतमुनि द्वारा रचित 'नाट्यशास्त्र' में इस तथ्य को उद्धृत करते हुए कहा गया है कि–

क्रीडनीयकमिच्छामो .श्यं श्रव्यज्च यद् भवेत्।
न वेदव्यवहारोऽय संश्राव्यः शूद्रजातिषु।
तस्मात् सृजापरं वेद पज्चमं सार्ववर्णिकम्।।' (1) 1/11.12

भरत के अनुसार, देवों की प्रार्थना पर ब्रह्मा ने विभिन्न वेदों के विभिन्न अंगों को ग्रहण कर नाट्य नामक पंचम् वेद बनाया। भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र' में इसे स्पष्ट करते हुए कहा कि –

'जाग्रह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च यजुर्वेदादभिनयान् रसानथवर्णादपि।' 1/17

पश्चात्य विद्वानों ने नाट्य के विभिन्न तत्वों तथा समाज एवं प्रकृति के विभिन्न विकासशील परिवर्तनों के आधार पर नाट्योत्पत्ति की समीक्षा प्रस्तुत करते हुए भिन्न–भिन्न विचार व्यक्त किये, जिनसे अवगत होना इस विषय के संदर्भ में उचित प्रतीत होता है।

वीरपूजा के नाट्योत्पत्ति सिद्वान्त के प्रवर्तक पाश्चात्य विद्वान डॉ0 रिज़वे थे, जिन्हाने अपनी पुस्तक 'ड्रामा ऐण्ड ड्रेमेटिक डान्सेज ऑफ नॉनयोरोपियन रेसेज' में बताया कि वीर पुरूषों के प्रति जातीय आदर प्रकट करने की भावना से पहले ग्रीक दुखान्त नाट्य प्रणयन का प्रारम्भ हुआ था। इसे ही आधार मानकर भारत में भी यह कार्य आरम्भ हुआ, जिसके उदाहरण कृष्ण लीला एवं राम लीला है। डॉ0 कीथ ने अपनी पुस्तक 'संस्कृत ड्रामा' में 'महाभाष्य' में निर्दिष्ट 'कंसवध' नाट्य का उदाहारण प्रस्तुत करते हुए कृष्ण पक्ष के लोगों के द्वारा रक्त मुख एवं कंस पक्ष के लोगों द्वारा काले मुख धारण करने का कारण हेमन्त ऋतु पर वसंन्त ऋतु की विजय के संकेत को बताते हुए प्राकृतिक परिवर्तन को मूर्त रूप देने का प्रयास किया। डॉ0

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

स्टेन कोनो ने अपनी पुस्तक 'दास इण्डिश ड्रामा' में पाश्चात्य देशों में शिशिर ऋतु में होने वाले 'मेपोल' नृत्य को भारतीय इन्द्रध्वजपर्व का प्रतिरूप बताते हुए कहा कि भारतीय वसन्तोत्सवों से ही भारतीय नाट्य उत्पन्न हुआ है। डॉ0 ल्यूडर्स एवं डॉ0 कोनो ने छाया नाट्कों को नाट्योत्पत्ति का प्रमुख कारण बताया। डॉ0 वान श्रोदर, डॉ0 हर्टल, डॉ0 विण्डिश, ओल्डेनबर्ग आदि ने ऋग्वेद् के संवाद सूक्तों जैसे यम–यमी, पुरूरवा–उर्वर्शी, इन्द्र–सरमा, अगस्त्य–लोपमुद्रा, इन्द्र,–मरूत आदि को गद्यपद्यात्मक होने के कारण संस्कृत नाट्को को भी गद्यपद्यात्मक बताया। डॉ0 बेबर द्वारा प्रतिपादित तथ्य जिसे प्रो0 विण्डिश का समर्थन प्राप्त हुआ, बेल को मढ़े चढ़ाने का पुष्कल प्रयास कहा गया। इसके अनुसार संस्कृत नाट्य ईसवी सन् के पूर्व नहीं था किन्तु, सिकन्दर जो एक नाट्य प्रेमी था, उसके भारत आने पर नाट्योत्पत्ति हुई। अतः ग्रीक एवं भारतीय नाटकों में अत्याधिक समानता है। जैसे नाटकों में अंक विभाजन, पात्रों का सूचनापूर्वक प्रवेश और पर्दा गिरने से पूर्व मात्र निर्गमन, उत्तमादि त्रिविध पात्र विभाजन, मंच निर्देश के भेद, विदूषक तथा प्रतिनायक जैसे विशिष्ट पात्र, प्रतिहारिणी रूप में यवन–स्त्रियाँ तथा यवनिका शब्द यह सभी ग्रीक रूपकों के प्रभाव को प्रतिबिम्बित करते हैं।

कुछ विद्वानों द्वारा संस्कृत रूपकों की तुलना स्पैनिश और अंग्रेजी रूपकों से करते हुए, शेक्सपियर से इनकी समानता दिखाते हुए निम्न तथ्य प्रस्तुत किए गए –

1– संस्कृत रूपको के पात्र 'विदूषक' एवं शेक्सपियर के पात्र 'मूर्ख' में समानता है।
2– दोनो में ही गद्य –पद्य का सम्मिश्रण है।
3– नाना पात्रों की अपेक्षा एक–एक व्यक्ति का चरित्र चित्रण दोनों में अधिक किया गया।
4– श्लेषालंकार का प्रयोग तथा शब्दों का हास्योत्पादक तोड़–मरोड़ है।
5– दोनों काल्पनिक एवं भयंकर अंशों का समावेश हैं।
6– पत्रों का लिखना, मृतकों को जीवित करना और कहानी में कहानी भरना, सभी में स्थान – स्थान पर पाया जाता है ।

जहाँ एक ओर संस्कृत रूपकों की तुलना अंग्रेजी एवं स्पैनिश रूपकों से की गयी है, वहीं दूसरी ओर इनमें भिन्नताओं का भी प्रतिपादन विभिन्न विद्वानों द्वारा किया गया :

1– श्वैजल ने कहा कि दुखमय एवं सुखमय शब्दों का प्रयोग उस अभिप्राय के साथ नहीं हो सकता, जिसके साथ प्राचीन भारतीय विद्वान इसका प्रयोग किया करते थे। इनमें गम्भीरता के साथ छिछोरापन एवं शोक के साथ हास्य का सम्मिश्रण था। इसका उदाहरण है कि जब नायक–नायिका शोक में मग्न रहते हैं, तब भी विदूषक का हास्य दिखलाया जाता है। जॉनसन कहते हैं कि भारतीय रूपकों में दुखान्त नहीं होता, जबकि शेक्सपियर के समय पाश्चात्य रूपकों में दुखान्त होता था। संस्कृत रूपको में शान्ति एवं अनुद्धतता थी जबकि यूनानी रूपकों में जीवन को हर्षरूप एवं गर्वरूप में देखना था।
2– संस्कृत रूपकों में यूनानी रूपकों की भाँति समूह गीत (बीवतने) नहीं होता।
3– आकार की दृष्टि से यूनानी एवं संस्कृत रूपक असमान होते हैं। उदाहरण स्वरूप मृच्छकटिक का आकार ऐस्काईलस (aaAeschylus) के प्रत्येक आकार से तिगुना है।

संस्कृत साहित्य के प्रमुख नाटकों की पाश्चात्य समीक्षा– संस्कृत साहित्य के महान कवि कालिदासकृत सात अंकों के 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नामक नाटक के मानवीय संस्पर्श, नाट्य कौशल तथा रमणीय रसपेशलता ने विश्व के विभिन्न विद्वानों को चमत्कृत कर उन्हें संस्कृत साहित्य के अनुशीलन की ओर हठात् प्रेरित किया है। अतः इस नाटक के विषय में सत्य ही कहा गया है कि –

'काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शंकुन्तला'

सर विलियम जोन्स ने 1789 ई0 मे सर्वप्रथम 'अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का अंग्रेजी में अनुवाद किया। प्रसिद्ध जर्मन कवि 'गेटे' ने इस नाटक का अनुवाद पढ़कर इसकी प्रशंसा करते हुए कहा कि :

"wouldest thou young year's blossoms and the fruits of its decline
And all by which the soul is charmed, enruptures, feasted, fed
Wouldst thou the earth and heaven itself on one sole name combine
I name the, O shakuntala and all at once is said"

ए0एल0 बॉशम ने 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' की तुलना शेक्सपियर की रचनाओं से करते हुए कहा कि–

In many respectsÞSakuntalaÞ is comparable to the more idyllic comedies of Shakespeare ' and kanva's hermitage is surely not for from the forest of Arden. The plot of the Play, like many of Shakespeare's plots, depends much on happy chances and on the supernatural, which, of course was quite acceptable to the audience for which Kalidasa wrote.[1]

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

संस्कृत नाटककारों में भास का नाम भी अग्रणी है। इन्होंने अपने दो नाटकों 'स्वप्नवासवदत्ता' एवं 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' में उज्जयिनी के राजा प्रद्योत का वर्णन किया है। राइस डेविड ने प्रद्योत एवं आजातशत्रु को बुद्ध एवं महावीर के समकालीन कहा है। संस्कृत नाट्य साहित्य में तो 'स्वप्नवासवदत्ता' का लेखक भास को ही माना जाता है, किन्तु, पश्चिमी विद्वान डॉ0 बार्नेट ने इन्हें रचयिता के रूप में अस्वीकार करते हुए कहा कि इस नाटक के कल्पित भास को भाषा एवं पारिभाषिक शब्द के सप्तम् शताब्दी के ग्रन्थों की भाषा के समान होने के कारण इसे किसी केरलीय कवि द्वारा रचित कहा जा सकता है।ङ डॉ0 थॉमस ने इसका रचयिता भास को ही बताया है। कहा जा सकता है कि भास के नाटकों में कुछ व्याकरणात्मक दोष है, जिसका कारण उस समय तक पाणिनीय व्याकरण का अप्रचलित होना बताया जाता है। किन्तु डॉ0 कीथ ने संस्कृत नाटक (हिन्दी अनुवाद) पृष्ठ सं0 116 में इसका कारण उस समय ऐतिहासिक काव्यों रामायण एवं महाभारत का होना बताया है। भास के नाटकों की खोज के पूर्व संस्कृत का सबसे प्राचीन उपलब्ध नाटक शूद्रक का 'मृच्छकटिक' माना जाता था, किन्तु अब भास के चारूदत्त नाटक की खोज के बाद 'मृच्छकटिक' उसके अनुकरण पर विरचित एवं परिवर्धित नाटक के रूप में स्वीकृत हो चुका है। 'मृच्छकटिक' का परिचय देते हुए ए0 एल0 बॉशम ने कहा है कि :

One olay at least, ÞThe little clay cart (P.441) has a superficial resemblance to the late Greek comedy of the school of Menander.?

मृच्छकटिक– में मनु को प्रमाण रूप में उद्धृत करते हुए कहा गया है कि–

अयं हि पातकी विप्रो न बाध्यो मनुरब्रवीत्।
राष्ट्रादस्मात् तु निर्वास्यो विभवैरक्षतैःसह।। 9–39

ब्यूलर ने मनु का समय 200ई0पू0 से लेकर 200 ई0 माना है। संस्कृत के प्रसिद्ध नाटक विशाखदत्त कृत 'मुद्राराक्षस' के कर्ता विशाखदत्त के विषय में कीथ ने Sanskrit Drama पृष्ठ संख्या–204 में कहा है कि विशाखदत्त सामन्त बटेश्वरदत्त के पौत्र तथा महाराज पृथु के पुत्र थे। मुद्राराक्षस का घटना स्थल पाटलिपुत्र था। फाहियान ने पाटलिपुत्र को मगध की राजधानी बतलाया है। व्हेनसांग ने Elphinstone's History of India, पृष्ठ संख्या–292 में कहा है कि उसने केवल पाटलिपुत्र के भग्नावशेष ही पाए हैं। विशाखदत्त द्वारा मुद्राराक्षस की रचना पल्लव राजा दन्ति वर्मा के समय 779–830 ई0 के मध्य हुई। तेलंग महोदय ने मुद्राराक्षस पर अपना भाष्य लिखते हुए इस पुस्तक की रचना सातवीं शताब्दी में माना है। मैक्डॉनल अपनी पुस्तक Sanskrit Literature पृष्ठ संख्या–365 में तथा रैप्सन JRAS, 1900 पृष्ठ सं0–535 में इसी मत का समर्थन करते हैं। प्रो0 ए0बी0कीथ ने 'जर्नल आफ रॉयल एशियाटिक सोसायटी, 1909 पृष्ठ सं0–145 में मुद्राराक्षस को मृच्छकटिक, रघुवंश और शिशुपालवध के बाद का बताया है। याकोबी ने Vienna Oriental Journal में पृष्ठ सं0–212 में कहा है कि मुद्राराक्षस (1/3) में जिस चन्द्रग्रहण का उल्लेख हुआ है, वह दिसम्बर, 860 में पड़ा था। इसी समय अवन्तिवर्मा के मन्त्री शूर ने इसी अवसर पर 'मुद्राराक्षस' का अभिनय कराया था। विन्टरनित्स ने कहा कि देवीचन्द्रगुप्त के उपलब्ध अंशों के आधार पर 'विशाखदत्त' का समय छठी शताब्दी प्रतीत होता है।

कल्हण कृत 'राजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि 'भवभूति' कन्नौज के राजा यशोवर्मा के आश्रित कवि थे।

कविर्वाक्तपतिराजश्री भवभूत्यादिसेवितः।
जितो ययौ यशोवर्मा तद्गुणास्ततिबन्दिताम्।। 4/144

कल्हण ने यह भी बताया है कि कश्मीर के राजा ललितादित्य मुक्तापीड ने इन्हीं यशोवर्मा को परास्त किया था। डा0 स्टीन ने Translation of Rajtaranagini, p-89 and notes on IV-134 कहा कि यह घटना 736ई0 के पूर्व की नहीं हो सकती है।

पश्चिमी विद्वानों ने संस्कृत विद्वानों के जीवन पर भी प्रकाश डाला है। कीथ ने भवभूति के जीवन का परिचय देते हुए कहा था कि इन्होंने अपने नाटकों की प्रस्तावना में बताया है कि ये उदुम्बरवंशी ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे। इस वंश के ब्राह्मण 'कृष्ण यजुर्वेद' की तैत्तिरीय शाखा को मानने वाले, वेद–वेदागों के ज्ञाता तथा सोमयज्ञ को करने वाले बताए गए हैं। प्राकृत भाषा के नृत्य प्रधान सट्टक 'कर्पूरमंजरी' के लेखक 'राजशेखर' ने लिखा है कि वे महेन्द्रपाल नामक राजा के गुरू थे। सियदोनी के शिलालेख के 'कीलहार्न' ने अपनी 'ऐपिग्रैफिया इण्डिका' 1.171 में कहा है कि महेन्द्रपाल का समय 903–904 ई0 और 907–908 ई0 के लगभग था। छः अंकों वाली कुन्दमाला का प्रकाशन दक्षिण भारत में 1933 में हुआ था। कीलहार्न ने 'ऐपिग्रैफिया इंण्डिका' 1.171 में इसका रचयिता अरारलपुर निवासी कवि दिड़नांग को बताया है। ग्रन्थ में उद्धृत है : 'तत्रभवतो ऽरारालपुरवास्तव्यस्य कबेर्दिड़नागस्य कृतिः कुन्दमाला' भट्टनारायण कृत 6 अंकों का नाटक वेणीसंहार है। जिसकी डा0 कीथ ने संस्कृत नाटक (हिन्दी अनुवाद) पृष्ठ 224 में आलोचना करते हुए कहा है कि यह नाटक अनाटकीय है, क्योंकि इसमें वर्णनों ने व्यापार को अवरुद्ध कर दिया है और विवरणों की बहुलता उलझन उत्पन्न करने के साथ–साथ इसकी

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

रोचकता को नष्ट कर देती है।

डा0 ल्यूडर्स द्वारा मध्य एशिया के तुरफान नामक स्थान से ताम्रपत्रों पर लिखित तीन रूपकों को खोजा गया जिसमें से एक को 'शारिपुत्रप्रकरण' के नाम से जाना जाता है। इनकी शैली अश्वघोष की लेखन कला से मिलती थी। अतः डा0 ल्यूडर्स ने इसे अश्वघोष द्वारा रचित ही बताया है। राजा हर्षवर्द्धन को संस्कृतानुरागी होने का गौरव प्राप्त था। यह भी कहा जाता है कि इसने तीन रूपकों– 1. प्रियदर्शिका 2. रत्नावली 3. नागान्द की रचना की किन्तु, डॉ0 हॉल एवं डॉ0 ब्यूहलर जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने इसका खण्डन करते हुए इन रूपकों का रचयिता हर्ष को नहीं माना। इसका कारण यह था कि मम्मट कृत 'काव्यप्रकाश' में अर्थप्राप्ति को काव्य का प्रयोजन बताते हुए कहा गया है कि–

काव्य यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिवृर्तये कान्ता समिमततयोपदेश युजे।। 1/2

मम्मट ने उदाहरण देते हुए कहा कि 'यथा श्री हर्षा देर्धाव कादीनामिव धनम्' अर्थात् जैसे श्री हर्ष आदि से धावक आदि को धन मिला। काव्यप्रकाश की निर्दशना में 'धावक' के स्थान पर 'बाण' पाठ मिलता है। अतः इसका रचयिता हर्ष के स्थान पर बाण को कहा गया है। चीनी यात्री इत्सिंग भारत में 671 से 695 ई0 तक रहा। इसमें अपने भारत यात्रा वर्णन में 'नागान्द' नाटक का रचयिता हर्ष को कहा। एच0एच0 विल्सन ने रत्नावली का रचयिता काश्मीर के अधिपति श्री हर्ष को बताया। जिसका खण्डन करते हुए इत्सिंग ने कहा कि तकोकुस (जंवानेन) द्वारा अनुदित 'भारत एवं मलय द्वीपों में बौद्ध धर्म का एक इतिहास' पृष्ठ संख्या–163 में बताया गया है कि हर्षवर्द्धन राजा ने जीमूतवाहन की कथा को पद्य–बद्ध किया था एवं नृत्य एवं अभिनय से इसका खेल करवाया था। कीथ ने 'संस्कृत ड्रामा' पृष्ठ 12–77 में वैज्ञानिक अनुसंधान के आधार पर नाटक की उत्पत्ति पर कई विचारधाराएँ उपस्थित की है। जिसके प्रधान एवं अंग संवाद, संगीत, नृत्य एवं अभिनय है।

अतः निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत रूपकों का अपना एक विशिष्ट स्थान है। ये प्रकृष्ट प्रतिभा के भारतीय प्रसूति हैं, किसी विदेशी साहित्य तरू की शाखा नहीं है। हॉरविट्ज ने भी कहा है कि क्या जर्मन नाटक चीनी से लिया हुआ ऋण है? यदि नही ंतो भारत के सन्दर्भ में भी ऐसा नहीं है। नाटक कला का उद्भव चीन और यूनान की भाँति भारत में भी निरपेक्ष रूप से हुआ है। यह अलग बात है कि समय–समय पर विदेशी विद्वानों द्वारा इसकी समीक्षा की जाती रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. A.L Basham -the Wonder That Was India', Edition III, Macmillan Publication, New Delhi,1967p-440.
2. Rhys David -'Buddhist India',p-3.
3. Dr Barnett -'Bulletin of School of Oriental Studies ',p-233 and J.R.A.S.,1919p-587.
4. Dr, Thomas-'Plays of Bhasa', J.R.A.S., 1922p-79.
5. S.K Belvalker - The Relationship of Shudrak's Marichchhakatika to the Charudatta of Bhasa pro ceedings of Ist oriental conf.1919 vol, IIpp-189-204.
6. A.L. Basham -'The Wonder That was India', Edition III, Op. Cit 1967 p-433.
7. M.Krishnamachariar - History of Cultural Sanskrit Literature foot note 3.
8. Winternitz- 'Historical Dramas in Sanskrit Literature', Krishnasswamy Aiyangor.com vol.p-360.
9. Keith- Bhavabhuti and Veda -JBRAS, 1914.

*****